# उपसंहार

साहित्येतिहास को जानने से पहले थोड़ा सा इतिहास सम्बंधित अध्ययन आवश्यक है। इतिहास का शाब्दिक अर्थ है कि तथ्यों तथा घटनाओं का काल-क्रमानुसार विवेचन । यानि किसी व्यक्ति, समाज, देश की महत्वपूर्ण घटनाओं का कालक्रमानुसार विवेचन करके ही एक इतिहास-ग्रन्थ लिखा जा सकता है। इसी तरह की परिभाषा साहित्येतिहास लेखन को लेकर शुक्लजी ने दी है कि 'जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहां की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्ब होता है तब यह निश्चित है कि जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में परिवर्तन होता चला जाता है। आदि से अंत तक इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य के साथ उनका सामंजस्य दिखाना ही 'साहित्य का इतिहास' कहलाता है।' ज्यों-ज्यों जनता की चित्तवृत्तियाँ बदलती हैं, साहित्य के स्वरूप में भी बदलाव आता है, इन्हीं परिवर्तनों का अध्ययन साहित्येतिहास है । साहित्येतिहास लेखन को लेकर काफी आलोचकों के अलग-अलग मत हैं। साहित्येतिहास के बारे में विद्वानों का मानना है कि साहित्य का इतिहास नहीं हो सकता क्योंकि इतिहास पुरानी चीजों का होता है और साहित्य कभी पुराना नहीं होता। अधिकांश विद्वानों ने इसे सभ्यताओं का इतिहास या लेखों का संग्रह कहा है। इनके अनुसार साहित्येतिहास वस्तुत: एक समीक्षा है, एक आलोचना है न कि इतिहास। इन तमाम तर्कों के बावजूद हिंदी साहित्य का इतिहास लिखा गया है तथा इसका आरम्भ गार्सा-द-तासी से माना जाता है। वैसे तो बहुत सारे ऐसे भी ग्रन्थ हुए हैं जिसमें साहित्येतिहास को लिपिबद्ध करने का प्रयास हुआ किन्तु उनमें कालक्रम, सन-सम्वत आदि के अभाव के कारण वे सहायक ग्रन्थ ही बने रहे। तासी का ग्रन्थ दूसरी भाषा में लिखा हुआ हिंदी साहित्येतिहास लेखन का पहला प्रयास था। इन्होंने कवियों का विवरण वर्णक्रम के अनुसार दिया है तथा हिंदी और उर्दू के कवियों को एक साथ प्रस्तुत किया है। इनके ग्रन्थ में

युगीन परिस्थितियों तथा साहित्यिक विशेषताओं का वर्णन नहीं मिलता जिसके कारण आगामी साहित्येतिहासकारों ने इतिहास ग्रन्थ न मानकर कवि-वृत्त-संग्रह ही माना है। हम इनके इस प्रयास से साहित्येतिहास लेखन की एक परम्परा का आरम्भ मान सकते हैं। इसके बाद शिवसिंह सेंगर, मिश्रबंधुओं, आचार्य शुक्ल, हजारीप्रसाद द्विवेदी आदि के व्यवस्थित प्रयासों को इस परम्परा में देख सकते हैं। सबसे पहले साहित्येतिहास लेखन में व्यवस्थित ग्रन्थ आचार्य शुक्ल ने लिखा जिसमें कालक्रम के साथ-साथ युगीन परिस्थितियों के वर्णन के साथ कवियों का विवेचन एक स्वच्छ इतिहास-दृष्टि से किया गया।

आचार्य शुक्ल ने प्रत्येक कालखंड में एक प्रमुख प्रवृत्ति को आधार मानकर उसका नामकरण किया तथा उस कालखंड में दो तरह की श्रेणी बनाई। पहली श्रेणी में उन कवियों का उल्लेख किया है जो मुख्य धारा या प्रवृत्ति के कवि हैं। दूसरी श्रेणी में वो कवि हैं जो उस कालखंड में गौण प्रवृत्ति के हैं या यूँ कहें कि मुख्य प्रवृत्ति से अलग जितनी भी प्रवृत्तियां उस कालखंड में हैं, उनका विवेचन है। यही दूसरी श्रेणी वाले कवि उनके इतिहास-ग्रन्थ में फुटकल कवि हैं। इन कवियों का जब सामान्य परिचय किया गया तो उनके कालखंड, जन्म, मृत्यु, उपस्थिति काल तथा लिंग सम्बन्धी अलग-अलग विचार पूर्ववर्ती तथा परवर्ती आलोचकों के यहाँ मिलते हैं। आचार्य शुक्ल के ग्रन्थ के बाद कुछ नयी रचनाएँ भी इन कवियों की मिलती हैं, जिनका उल्लेख करना आवश्यक हो जाता है। शुक्लजी के ग्रंथानुसार फुटकल कवि आदिकाल में दो, भक्तिकाल में बाईस तथा रीतिकाल में छयालीस हैं। फुटकल कवियों के अध्ययन से एक बात तो स्पस्ट हो जाती है कि ये कवि अपनी भाषा और नवीन काव्य-शैली के आधार पर प्रयोगों के कवि हैं। गौर देने पर मिलता है कि पहले कालखंड के फुटकल कवि आगामी कालखंड के मुख्य प्रवृत्ति के कवि हैं। दो कालखंडों के बीच के इन कवियों को संक्रमण के कवि न कहकर हम इन्हें संगम के कवि कह सकते हैं। अगर आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इतिहास-ग्रन्थ को ही देखते हैं तो ये फुटकल

कवि मुख्य कवियों से ज्यादा पृष्ठों पर हैं। शुक्लजी के यहाँ 'फुटकल' का अर्थ संख्या से भी लगा सकते हैं जैसे जहाँ इस खाते में कम कवि हैं वहां उन्होंने 'फुटकल कवि' नाम दिया है तथा जहाँ इन कवियों की संख्या ज्यादा है वहां 'अन्य कवि' का प्रयोग किया है।

फुटकल कवि की अवधारणा पर बात करें तो साहित्येतिहास में इस तरह के खाते प्रत्येक साहित्येतिहासकार के ग्रन्थ में नजर आते हैं। साहित्येतिहास की परम्परा में पहला प्रयास तासी का है, इनके ग्रन्थ में भी हमें 'परिशिष्ट' नामक खाता मिलता है जिसमें इन्होंने अलग-अलग तरह की रचनाओं का वर्णन किया है। इसके बाद 'शिवसिंह सरोज' में भी ऐसा ही एक खाता बना ग्रन्थकार ने छप्पन कवियों का उल्लेख किया है। ग्रियर्सन अपने ग्रन्थ में अध्याय आठ में इसी तरह का 'अन्य कवि' नामक खाता बनाया है। मिश्रबंधु विनोद में भी इसी तरह की श्रेणियां हमें नजर आती हैं। कह सकते हैं कि प्रत्येक ग्रन्थकार ने अपनी सुविधानुसार इस तरह की श्रेणियां बनाई हैं जिनमें कहीं अलग प्रवृत्ति तथा कहीं साधारण श्रेणी के कवियों का विवेचन किया है।

आचार्य शुक्ल के ग्रन्थ में इन फुटकल कवियों के अतिरिक्त भी कई महत्वपूर्ण कवियों को शामिल किया जा सकता था। प्रत्येक कालखंड में और भी कई कवि ऐसे हैं जो काव्य-दृष्टि से मुख्य कवियों जितने ही महत्वपूर्ण हैं। आदिकाल में हम सरहपा,स्वयंभू, पुष्पदंत, अद्दहमाण, घणपाल तथा मूनि कनकामर जैसे कवियों को आचार्य शुक्ल के साहित्येतिहास ग्रन्थ में शामिल कर सकते हैं। ये कवि अपने काव्य शैली तथा प्रवृत्ति के आधार पर मुख्य कवियों जितना ही महत्व रखते हैं। भक्तिकाल में भी पल्टूदास तथा अन्य कई सिक्ख कवि हैं जिन्हें शामिल किया जा सकता है । रीतिकाल में भी कुछ कवि तथा कवयित्रियाँ अपने काव्य के आधार पर अपना महत्व साबित करते हैं।

किसी भी इतिहास तथा साहित्येतिहास को लिखने के लिए एक पद्धति की आवश्यकता होता है । किसी एक पद्धति को अपनाकर लेखक सामग्री संकलन करता है, कालक्रम निश्चित करता है तथा

अपनी इतिहास-दृष्टि के आधार पर विवेचन विश्लेषण करता है। साहित्य इतिहास लेखन में वर्णानुक्रम से लेकर वैज्ञानिक पद्धति तक अलग-अलग ग्रन्थकारों ने अलग-अलग पद्धति को अपनाकर साहित्येतिहास ग्रन्थ लिखे हैं। आचार्य शुक्ल ने विधेयवादी पद्धति को अपनाकर 'हिंदी साहित्य का इतिहास' ग्रन्थ लिखा है। इस पद्धति के अनुसार शुक्लजी ने प्रत्यक्ष अनुभवों से प्राप्त ज्ञान के आधार पर लेखन किया है। विधेयवाद का मानना यह भी है कि ज्ञान को निरीक्षण के जरिए पैदा किया जा सकता है। अनेक आलोचकों ने अपना मत रखा है कि शुक्लजी ने विधेयवादी दृष्टि न अपनाकर ऐतिहासिक और वस्तुवादी दृष्टि अपनाई है। लेकिन यहाँ ध्यान देने वाली बात यह है कि जिन तत्वों (जाति, वातावरण) के आधार पर विधेयवादी पद्धति टिकी है उन्हीं तत्वों का व्यवहार ऐतिहासिक पद्धति में होता है।

आचार्य शुक्ल ने अपनी विचार एवं तर्क पद्धति से साहित्य में अनेक स्थापनाएं की हैं। इन्होंने इतिहास सम्बन्धी अपने दृष्टिकोण को स्पस्ट किया है कि उनका उद्देश्य साहित्य का एक पक्का और व्यवस्थित ढ़ांचा खड़ा करना था, कवि कीर्तन करना नहीं। शुक्लजी ने तथ्यों के सत्यापन तथा प्रामाणिकता की छानबीन पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया बल्कि साहित्य के स्वरूप में आने वाले परिवर्तनों पर ज्यादा बल दिया है। उन्होंने शिक्षित जनता के स्थान पर जनता और स्थाई प्रतिबिम्ब की जगह संचित प्रतिबिम्ब का प्रयोग कर खुद के ही अंतर्विरोधों को संवारा है। लोक शब्द इनके यहाँ बहुतायत से प्रयोग हुआ है। करुणा और प्रेम के संदर्भ में उनका मत है कि जब लोक के प्रति करुणा सफल हो जाती है तब लोक पीड़ा और विघ्नबाधा मुक्त हो जाता है। इसी तरह की अनेक स्थापनाएं साहित्येतिहास लेखन से इतर उनकी हमें देखने को मिलती हैं। 'चिंतामणि' के संदर्भ में विद्वानों के मत हैं कि इसमें चिंतन के कई मूल्यवान सूत्र हैं जो समस्त मानव जाति को विश्वमंगल का सच्चा रास्ता दिखा सकते हैं। इनकी कविताएं भी प्रकृति प्रेम तथा देशभक्ति के भाव से ओत-प्रोत हैं।

साहित्येतिहास में सबसे ज्यादा अन्तर्विरोध काल-विभाजन तथा प्रवृत्तियों के निर्धारण को लेकर हैं। प्रत्येक इतिहासकार किसी काल विशेष में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा संस्कृतिगत परिवर्तनों को देखते हुए अपने साहित्यिक विवेक से साहित्य का इतिहास प्रस्तुत करता है। इसी तरह का प्रयास हमें शुक्लजी के ग्रन्थ में हमें मिलता है। लेकिन इनके काल-विभाजन हमें कहीं-कहीं अन्तर्विरोध नजर आता है। शायद शुक्लजी जी भी उन जगहों पर असमंजस्य में हैं, उन्हें कई जगहों पर खुद निर्धारित प्रवृत्तियों का बचाव खुद ही करना पड़ता है। देख सकते हैं कि आदिकाल को उन्होंने देशभाषा काल तथा आधुनिक काल को गद्यकाल का नाम भी देना पड़ा है। आदिकाल में अपभ्रंश, हिंदी के आरम्भ, सीमांकन की समस्या, पहले कवि, सिद्धों और योगियों के काव्य आदि की विवेचना शुक्लजी के बौद्धिक व्यायाम में कमी दिखाता है। प्रत्येक कालखंड में अवधारणों तथा मान्यताओं को लेकर थोड़े बहुत मतभेद परवर्ती साहित्येतिहास में मिलते जरूर हैं लेकिन उन सबका उत्तर भी हमें शुक्लजी के ग्रन्थ से ही मिल भी जाता है। जिस समय यह ग्रन्थ लिखा गया, उन युगीन परिस्थितियों तथा इनकी पद्धति पर ध्यान देने से अधिकतर मतभेदों का निवारण उन्हीं के शब्दों में हमें मिल जाता है। शुक्लजी के बाद के साहित्येतिहास लेखन में जो लेखक हुए हैं, उनके फुटकल कवि तथा शुक्लजी के काल-विभाजन सम्बन्धी जो मत हैं उनकी समीक्षा का प्रयास भी किया गया है।